6

शहर, व्यापारी एवं कारीगर

ज्योत्स्ना, अपने माता–पिता के साथ मदुरई घूमने के लिए गई हुई थी। वहाँ अनेक मंदिरों, बाजार की हलचलों, रेशम की साड़ी पर कढ़ाई करते हुए कारीगरों को देखकर उसके मन में शहर के विकास की जानकारी प्राप्त करने का विचार उत्पन्न हुआ ?

© BSTBPC WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

शहरों के अनेक रूप :

पिछले वर्ष आपने प्राचीन भारत के शहरों के बारे में पढ़ा था। आइए इस बार मध्यकालीन शहरों के बारे में जानें। उस समय प्रमुखतः चार प्रकार के शहर देखने को मिलते हैं। इनमें से कुछ शहर प्रशासन के केन्द्र थे। कुछ शहर वाणिज्यिक–व्यापारिक गतिविधियों एंव दस्तकारी के लिए मशहूर थे। कुछ दूसरे शहर तीर्थ यात्रा एंव मंदिर नगर के कारण महत्वपूर्ण थे। विदेशी व्यापार के कारण बंदरगाह (पत्तन) शहरों का विकास हुआ। कई शहर तो एक साथ ही शहरों के उपरोक्त विभिन्न रूपों को अपने में समाहित किये हुये फल–फूल रहे थे।

प्रशासनिक नगर :

ये नगर मुख्य रूप से शासक वर्ग के सत्ता केन्द्र अर्थात राजधानियाँ थीं। इन शहरों में अनेक राजमहल होते थे। इसमें शासक एवं उनके परिवार, अधिकारी, नौकर–चाकर, सैनिक रहते थे। राजमहल में सभा कक्ष बने होते थे, जहाँ से शासक (राजा) द्वारा अपनी प्रजा एवं अधीनस्थ अधिकारियों के लिए आदेश जारी किया जाता था।

शहरों में बाजार हुआ करता था जहाँ नगर निवासियों के लिए अनाज, कपड़ा, आभूषण एवं दैनिक आवश्यकता की अन्य वस्तुओं की बिक्री होती थी। दिल्ली के सुल्तानों एवं मुगल शासकों ने व्यक्तिगत एवं राजकीय आवश्यकता की वस्तुओं की आपूर्ति के लिए शाही कारखानों के निर्माण किये थे। (कारखानों के संबंध में आगे अध्ययन करेंगे) इस प्रकार के शहरों में दक्षिण भारत में कांचीपुरम, मदुरई, तंजावूर तथा उत्तरी भारत में दिल्ली, आगरा, लाहौर आदि शहरों का नाम लिया जा सकता है।

मंदिर नगर एवं तीर्थ स्थल :

दक्षिण भारत में शासक, व्यापारियों एवं धनाढ्य लोगों, के द्वारा देवी–देवताओं के प्रति अपनी श्रद्धा, आस्था एवं भक्ति–भाव को प्रकट करने के लिए मंदिर बनाया जाता था एवं ग्राम दान दिया जाता था। फलस्वरूप मंदिरों के पास अपार धन–संपत्ति जमा हो गया था। मंदिरों के कर्त्ता–धर्त्ता ने मंदिर के धन को व्यापारियों को ऋण देने में लगाया। इस प्रकार इन पवित्र केन्द्रों ने क्षेत्र विशेष के वाणिज्य–व्यापार को प्रोत्साहित करने में कड़ी के रूप में काम किया, क्योंकि उस समय मंदिर ही बहुमूल्य वस्तुओं के सबसे बड़े उपभोक्ता थे। धीरे–धीरे बड़ी संख्या में शिल्पकार (कारीगर) एवं व्यापारी मंदिरों की जरूरतों को पूरा करने के लिए मंदिर के निकट बसते गये। दक्षिण भारत में आठवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच तंजावूर, कांचीपुरम, तिरुपति आदि मंदिर नगरों का विकास इसी तरह से हुआ।

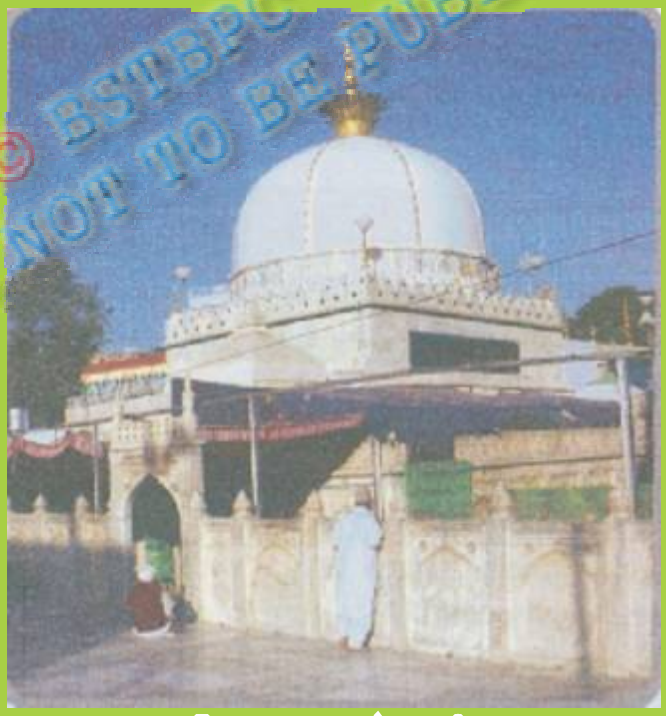

चित्र : 1 अजमेर शरीफ

© BSTBPC WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

भक्ति आंदोलन के विस्तार के कारण तीर्थ स्थलों का महत्व बढ़ा। धार्मिक आस्था के पवित्र स्थलों में विभिन्न क्षेत्रों से लोग पूजा–पाठ एवं दर्शन के लिए आया करते थे। मथुरा, काशी, वृंदावन (उत्तर प्रदेश), अजमेर, माउंट आबू (राजस्थान), सोमनाथ (गुजरात) आदि शहर तीर्थस्थल के रूप में प्रसिद्ध हैं।

वाणिज्यिक नगर :

चित्र : 2 नगर का एक बाजार

© BSTBPC WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

कुछ ग्रामीण बस्तियाँ जो अपने खास एवं उत्पादित वस्तुओं के लिए व्यापार के प्रमुख केन्द्र के रूप में उभरीं, वे धीरे–धीरे शहरी विकास के केन्द्र बन गये। इनका विकास व्यापार बाजार के केन्द्र के रूप में हुआ। कुछ शहर खास वस्तुओं के व्यापार के लिए विशेष बाजार समझे जाते थे। क्योंकि इनका उत्पादन स्थानीय स्तर पर होता था। उदाहरणस्वरूप–बुरहानपुर (कपास), अहमदाबाद (कपड़ा), बयाना (नील), कांचीपुरम (सूती कपड़ा), कैम्बे (रत्न बाजार) आदि।

SOL www.absol.in

बन्दरगाह (पत्तन) नगर :

शहरों के तैयार माल को दूसरे देशों में ले जाने के लिए समुद्र के तटीय क्षेत्रों में शासकों एवं व्यापारियों द्वारा बन्दरगाहों का विकास किया गया। अंजुवन, मनीग्रामम्, नानादेशी जैसे व्यापारिक समुदायों के कारण तटीय बस्तियों का महत्व बढ़ा। शासकों के विशेष फरमानों के द्वारा विदेशियों (यहूदियों, ईसाइयों, अरबी लोगों) को तटवर्ती शहरों में बसने एवं व्यापार करने की छूट दी गई। गुजरात, जहाँ जैन व्यापारियों का बोलबाला था, पश्चिम भारत का प्रमुख व्यापारिक केन्द्र था। यहाँ के बन्दरगाह–भड़ौच एवं सूरत मध्यकाल में व्यापारिक केन्द्र के रूप में फले–फुले। भारत के पश्चिमी तट का अरब, फारस की खाड़ी और उसके आगे के देशों के साथ व्यापारिक संबंध रहा था। दसवीं से बारहवीं शताब्दियों के बीच में थाणा, गोवा, भटकल, मंगलूर, कोचीन जैसे बन्दरगाह का विकास लंबी दूरी के व्यापार के कारण हुआ। पूर्वी तट पर स्थित प्रमुख बन्दरगाह–हुगली, मोटुपल्ली, मसूलीपटनम दक्षिण पूर्वी व्यापार का मुख्यद्वार बन गया। अरब के घोड़े के व्यापारियों के कारण कर्नाटक एवं केरल के तटीय शहरों का महत्व बढ़ गया। यूरोपीय व्यापारियों के आगमन के साथ पश्चिमी एवं पूर्वी सागरतट पर अनेक नए पत्तन और नगर विकसित हुए, जो धीरे–धीरे उनके सैनिक एवं प्रशासनिक केन्द्रों में बदल गए। बम्बई, कलकत्ता और मद्रास इसके प्रमुख उदाहरण थे।

शहरी परिदृश्य :

अधिकांश शहर एक चहारदीवारी से घिरा होता था। इसमें एक या अधिक प्रवेश द्वार होते थे। शहर की प्रमुख आबादी इस चहारदीवारी के अंदर निवास करती थी। सुनियोजित ढंग से बसाये गये शहरों में बाजार अलग से बनाये

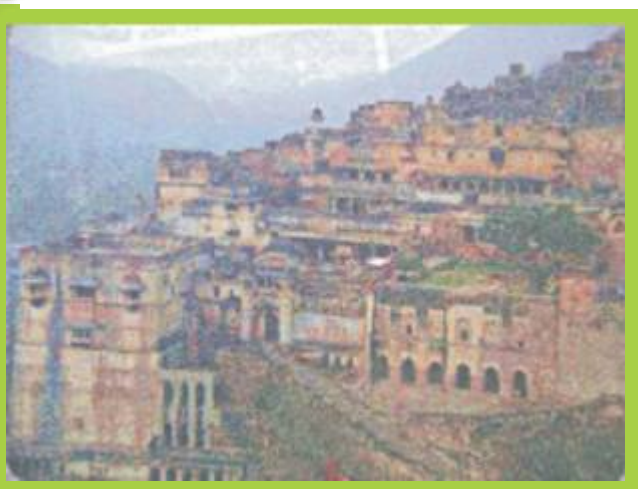

चित्र : 3 मध्यकाल का भारतीय शहर

© CBSE WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

जाते थे। कई बाजार किसी खास वस्तु के व्यापार के लिए विशिष्ट रूप से जाने जाते थे। शहर कई मुहल्ले में बँटे होते थे। अधिकतर मुहल्ले किसी खास जाति या उत्पादक समुदायों के नाम से जाने जाते थे। उदाहरण के लिए–कुंजड़ी मुहल्ला (सब्जी बेचने वाले), मोची बाड़ा (जूते बनाने वाले), मुहल्ला जरगरान (सुनार), कूचा रंगरेज (कपड़े रंगने वाले)।

शहरों में विभिन्न जाति, धर्म, व्यवसाय के लोग रहते थे। शासक, अमीर एवं व्यापारी शहरों के सबसे धनी लोग थे। शहर के अधिकतर लोग मध्यम वर्ग के थे। इस वर्ग में छोटे मनसबदार, कर्मचारी, दुकानदार, साहुकार, चिकित्सक (वैद्य), चित्रकार, संगीतकार, सुलेखक (पांडुलिपि की मूल प्रति लिखने वाला) शामिल थे। धार्मिक कार्यों से जुड़े लोग–पंडित, उलेमा, सूफी संत आदि शहरों के निवासी थे। इन्हें आमतौर पर राज्य से इनाम के रूप में करमुक्त भूमि अनुदान में दिया जाता था, जो शहरों के आस–पास होती थी। इसके अलावा सैनिक, नौकर, गुलाम, कारीगर (शिल्पकार) इत्यादि निम्न स्तर के लोग भी शहरों में निवास करते थे। ये लोग उच्च वर्ग के लोगों के यहाँ काम करके अपनी आजीविका चलाते थे।

© BSTBPO WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

*** आप अपने निकट के शहर का भ्रमण कर वहाँ निवास करने वाले विभिन्न धर्म, जाति एवं व्यवसाय से जुड़े लोगों का पता लगायें तथा उनके खान–पान, पोशाक एवं व्यवसाय की जानकारी प्राप्त करें?**

व्यापार की दशा एवं दिशा :

शहरों का मुख्य आकर्षण वहाँ की मंडियाँ एवं बाजार थे। प्रांतों की राजधानियाँ तथा समुद्र के तट के किनारे स्थित शहरों ने व्यापार–वाणिज्य की गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन शहरों के बाजारों में देश–विदेश के व्यापारी क्रय–विक्रय किया करते थे। व्यापारी लोग शहरों की खपत से अधिक तैयार वस्तु को ले जाकर दूसरे स्थानों पर बेचने लगे।

इस काल में देश के भीतर व्यापार (आंतरिक व्यापार) के विस्तृत होने का पता चलता है। प्रत्येक कस्बा (छोटे शहर) में 'हाट' या 'बाजार' होता था। इसके अलावा नियत समय (सप्ताह या मासिक या वार्षिक) पर लगने वाले 'मेलों' में व्यापारी आते थे और वस्तुओं की खरीद–बिक्री होती थी। फेरी लगाकर माल बेचने वाले व्यापारियों का एक वर्ग था, जो लोगों की जरूरतों को पूरा करते थे। इसके अतिरिक्त राजपुताना क्षेत्र के बंजारे अनाज, नमक, चीनी, मक्खन आदि वस्तुएँ सैकड़ों बैलों पर लादकर एक–स्थान से दूसरे स्थान को ले जाते थे। बंजारा लोग घुमंतू व्यापारी थे। उनका कारवां **टांडा** कहलाता था। अध्याय–3 में पढ़े होंगे कि अलाउद्दीन **खिल्जी** बंजारों का उपयोग नगर के बाजारों तक अनाज की ढुलाई के लिए करते थे। बादशाह जहाँगीर ने अपनी आत्मकथा **"तुजुक–ए–जहाँगीरी" में** लिखा है कि बंजारे भिन्न–भिन्न क्षेत्रों से अनाज ले जाकर शहरों में बेचा करते थे। वे मुगलों के सैनिक अभियान के दौरान सेना के लिए खाद्य वस्तुओं की ढुलाई का काम **भी** करते थे।

बंजारे

सत्रहवीं सदी के आरंभ में भारत आनेवाले एक अंग्रेज व्यापारी पीटर मुंडी ने बंजारों का वर्णन किया है–

> **"सुबह हमारी मुलाकात बंजारों के एक टांडा से हुई जिसमें 14000 बैल थे। सारे पशु गेहूँ और चावल जैसे अनाजों से लदे हुए थे।... ये बंजारे लोग अपनी घर गृहस्थी, बीवी और बच्चे अपने साथ लेकर चलते हैं। एक टांडा में कई परिवार होते हैं। उनका जीने का तरीका उन भारवाहकों से मिलता–जुलता है जो लगातार एक जगह से दूसरी जगह जाते रहते हैं। गाय बैल उनके अपने होते हैं। कई बार वे सौदागरों के द्वारा भाड़े पर नियुक्त किये जाते हैं, लेकिन ज्यादातर वे खुद सौदागर होते हैं। अनाज जहाँ सस्ता उपलब्ध है, वहाँ से वे खरीदते हैं और उस जगह ले जाते हैं जहाँ वह महँगा है। वहाँ से वे फिर ऐसी चीजें लाद लेते हैं जो किसी और जगह मुनाफे के साथ बेची जा सकती है।...**

© BSTBPC WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

टांडा में छह से सात सौ लोग हो सकते हैं।...वे एक दिन में छह या सात मील से ज्यादा सफर नहीं करते–यहाँ तक कि ठंडे मौसम में भी। अपने गाय बैलों पर से सामान उतारने के बाद वे उन्हें चरने के लिए खुला छोड़ देते हैं, क्योंकि यहाँ जमीन पर्याप्त है और उन्हें रोकने वाला कोई नहीं।"

* पता करें कि आजकल गाँव से शहरों तक अनाज ले जाने का काम कैसे होता है। यह बंजारों के तौर–तरीकों से किस तरह भिन्न या समान है ?

* क्या आपके गाँव, कस्बा या शहर के आस–पास मेला का आयोजन होता है?आप यह जानकारी प्राप्त करें कि मेले में कौन–कौन सी वस्तुएँ खरीदी–बेची जाती हैं?

बड़े पैमाने के व्यापार कुछ विशेष व्यापारी समुदायों तक सीमित थे। उत्तरी भारत के मुल्तानी, गुजराती, बनिया तथा दक्षिण भारत के मलय चेट्टी एवं सूरों (अरब, तुर्की, खुरासानी, मुस्लिम व्यापारी) कुछ ऐसे व्यापारी समूह थे, जिन्होंने दूर के देशों के साथ व्यापार संबंध बनाये।

भारत के पश्चिमी तट पर स्थित सूरत, भड़ौच, खंभात (कैम्बे), कालीकट, गोआ जैसी बंदरगाह पश्चिमी देशों के साथ मसाला, सूती, कपड़ा, नील, जड़ी–बूटी के व्यापार के प्रमुख केन्द्र थे। इन वस्तुओं को जहाजों में भरकर फारस की खाड़ी एंव लाल सागर के बंदरगाहों को भेजा जाता था। यहाँ से वेनिस एवं जेनोआ के व्यापारी इन्हें यूरोप के देशों तक ले जाते थे। बंगाल की खाड़ी क्षेत्र में स्थित बंदरगाहों–सतगाँव, पुलीकट, मसुलीपटनम, नागपट्नम से कपड़ा, अनाज, खाद्य सामग्री, सूती धागा इत्यादि वस्तुएँ दक्षिण–पूर्व एशिया को भेजा जाता था।

यूरोप के देशों से ऊनी वस्त्र, सोना, चांदी भारत लाया जाता था। पूर्वी अफ्रीका से हाथी दाँत एवं मध्य एशिया से खजूर, ताजे फल, सूखे मेवे अरब व्यापारियों द्वारा भारत लाए जाते थे। चीन से रेशम तथा दक्षिण–पूर्व एशिया से मसाला भारत आने वाली

© BSTBPC NOT TO BE PUBLISHED

प्रमुख वस्तु थी। फारस की खाड़ी से हरमुज के रास्ते घोड़े, मोती, रेशम, कालीन आदि आयात की वस्तुएँ थीं। गुलामों को भी इसी रास्ते से लाया जाता था और उसकी खरीद–बिक्री की जाती थी।

व्यापारिक मार्ग, यातायात एवं विनिमय के साधन :

सड़कों का विस्तृत जाल बंदरगाहों को एक–दूसरे से जोड़े हुए था। इनके द्वारा बाजारों एवं नगरों के बीच वाणिज्य–व्यापार होता था। अलबेरूनी ने अपने विवरण में 15 व्यापारिक मार्गों का उल्लेख किया।

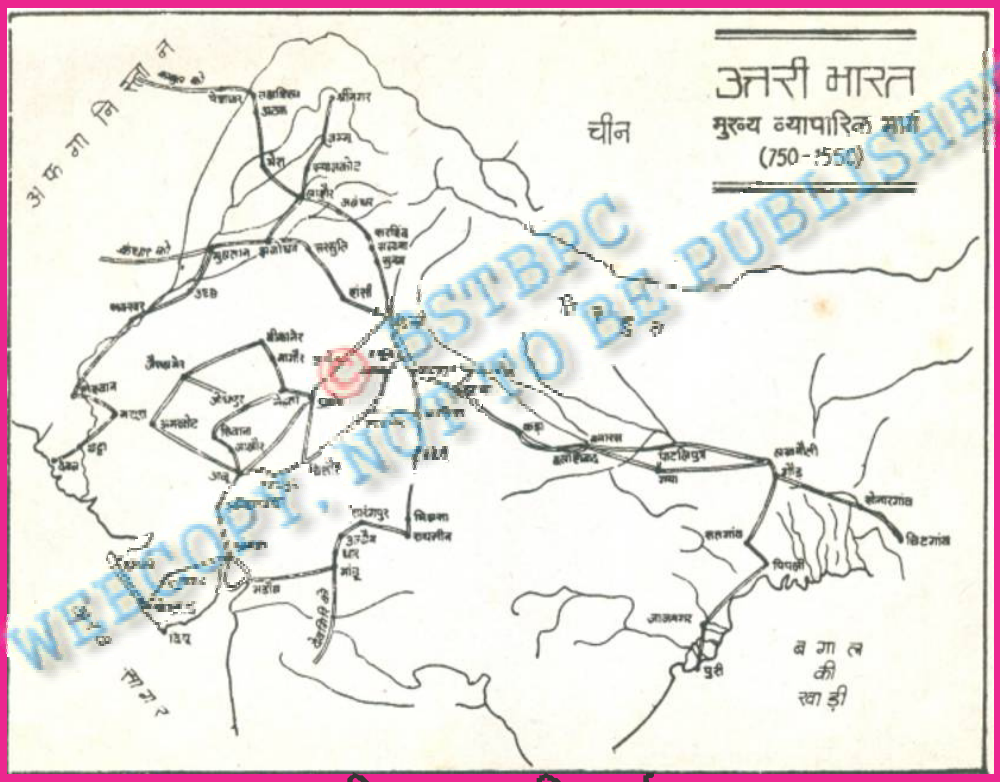

चित्र : 4 व्यापारिक मार्ग

© BSTBRC NOT TO BE PUBLISHED WEBCOPY

***मानचित्र 4 देखकर विभिन्न शहरों एवं बंदरगाहों को जोड़ने वाले मार्गों की पहचान करें?**

सड़कों के अलावा भारत के पश्चिमी एवं पूर्वी तटों के साथ लगे समुद्री मार्गों ने भी विदेशी व्यापारिक सम्पर्कों को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मैदानी इलाकों में सामानों को लाने ले जाने का मुख्य साधन बैलगाड़ियाँ थीं। लेकिन जहाँ ये नहीं चल पाती थीं, वहाँ सामानों को ढोने के लिए बैल, खच्चर, ऊँट एवं आदमियों का इस्तेमाल किया जाता था। नावों का उपयोग जलमार्ग पर होता था, जबकि बड़े जहाज समुद्रों में चलते थे।

वस्तुओं की खरीद–बिक्री में सिक्के विनिमय के प्रमुख साधन थे। सिक्के सोने, चांदी एवं ताम्बे के बने होते थे। इस काल में दिरहम, जीतल, टंका, दिल्लीवाल, बहलोली, स्वर्ण मुहर आदि सिक्के के प्रचलन का प्रमाण मिलता है। मुगल काल में रुपया और दाम मुख्य मुद्रा थी। व्यापारियों का एक वर्ग सर्राफों का था, जो व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। सर्राफ सिक्के की धातुगत शुद्धता और वजन की जाँच तथा धातु मुद्रा की विनिमय दर निर्धारित करते थे। वे बैंकर के रूप में लोगों के पैसे का लेन–देन भी करते थे और 'हुंडियाँ' भी जमा करते थे। हुंडी कागज पर लिखा एक वचन पत्र होता था, जिसके द्वारा किसी स्थान और समय पर लिखी गई राशि देने की व्यवस्था की जाती थी। इसका आरंभ वाणिज्यिक कार्यों के लिए मुद्रा के रूप में अधिक धन को लेकर जाने वालों के खतरे को ध्यान में रखकर हुआ। सभी विदेशी व्यापारियों ने भारतीय साहूकारों की ईमानदारी की प्रशंसा की है।

© BSTBPC WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

व्यापारियों का संगठन :

व्यापारी समुदाय ने अपने हितों की रक्षा के लिए व्यापारी संघ बनाये। दक्षिण भारत में कई व्यापारिक संघों का उदय हुआ। अभिलेखों में इन संगठनों को 'समाया' कहा गया है। इसका आशय है–सदस्यों के बीच सहमति से पैदा हुआ संगठन। प्रत्येक व्यापार संघ की एक सभा होती थी। संघ आमतौर पर एक प्रमुख के अधीन काम करती थी, जिसका चुनाव संघ के सदस्य करते थे। संघ अपनी सदस्यता और कार्य करने के तरीकों के लिए स्वयं नियम कानून बनाती थी। यदि सदस्य संघ के नियमों को तोड़ते थे तो वह सदस्यों को सजा दे सकता था या उनको निकाल सकता था। संघ के प्रमुख

अपने व्यापारी सदस्यों के प्रतिनिधि के रूप में राजा से मिलकर बाजार में बिकने वाली वस्तुओं पर लगने वाली चुंगी अथवा कर को तय करने का काम करता था। वे वस्तुओं के दाम भी तय करते थे। दक्षिण भारत में दो महत्वपूर्ण व्यापार संघ थे–नानादेशी एवं मनीग्रामम्। इनका व्यापार चीन, श्रीलंका एवं दक्षिण पूर्वी एशिया तक फैला हुआ था।

***आप शिक्षक की मदद से पता लगायें कि वर्तमान समय में किसी व्यापार–व्यवसाय से संबंधित, क्या ऐसे संघ कायम हैं?आप ऐसे संघों के गठन एवं कार्यकलाप की जानकारी प्राप्त करें?**

नगरों के कारीगर :

चित्र : 5 वस्त्र पर कढ़ाई करता हुआ कारीगर

मध्ययुगीन शहरों में कारीगर (शिल्पी) अपने व्यवसाय को बरकरार रखे हुये थे। अधिकांश व्यवसाय स्थानीय रूप में थे, जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तांतरित किये जाते रहे थे। कई शहर अपने विशिष्ट उत्पादों के लिए मशहूर थे। इसके अतिरिक्त राजकीय कारखाने भी थे, जो दिल्ली के सुल्तानों एवं मुगल बादशाहों के द्वारा स्थापित किये गये थे। इन कारखानों में शासक एवं उनके परिवार तथा राज्य की आवश्यकता की वस्तुएँ बनाई जाती थीं।

© BSTBPC NOT TO BE PUBLISHED WEBCOPY

सत्रहवीं शताब्दी में फ्रांसीसी यात्री बर्नियर मुगल राजधानी दिल्ली आया था और उसने कारखानों में काम होते देखा। वह लिखता है कि—"गढ़ी के भीतर अनेक स्थानों पर बड़े–बड़े कमरे देखे जा सकते हैं, जिन्हें कारखाने या कारीगरों की कर्मशालाएँ कहा जाता है। किसी एक कमरे में एक उस्ताद की निगरानी में कारीगर कशीदाकारी करने में लगे रहते हैं, दूसरे कमरे में स्वर्णकार, तीसरे कमरे में चित्रकार, चौथे में लाख की पालिस करने वाले, पाँचवें में जड़िये, दर्जी, मोची, छठे में रेशम बनाने और कलावात का काम करने वाले अर्थात् ऐसी बारीक मलमल बनाने वाले, जिनपर खूबसूरत कढ़ाई की जाती है। कारीगर हर रोज सुबह अपनी–अपनी कर्मशालों में आते हैं और सारा दिन वहाँ काम करते हैं, शाम को अपने घर लौट जाते हैं। कशीदा करने वाला अपने बेटे को कशीदाकार, स्वर्णकार अपने बेटे को स्वर्णकार और शहर का हकीम अपने बेटे को हकीम होने का प्रशिक्षण देता है। कोई भी अपने धंधे या व्यवसाय से बाहर विवाह संबंध स्थापित नहीं करता। इस प्रथा का पालन करने में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही समान रूप से कट्टर हैं।"

*बर्नियर द्वारा वर्णित मुगल कारखानों में करने वाले कारीगरों की सूची बनाएँ और सोचकर बताएँ कि कारखानों में बनी वस्तुओं का उपयोग किस वर्ग के लोग करते थे?

WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED
BSTBPC

भारत मे वस्त्र निर्माण प्राचीन काल से ही एक प्रमुख व्यवसाय था। ढाका का मलमल सारे संसार में अपनी बारीकी के लिए प्रसिद्ध था। दक्षिण भारत में कांचीपुरम एवं मसूलीपटनम सुती वस्त्र निर्माण के मुख्य केन्द्र थे। खम्भात के रेशमी कपड़े की माँग इतनी अधिक थी कि अलाउद्दीन खिलजी को उसकी बिक्री नियंत्रित करनी पड़ी थी। कश्मीर ऊनी शाल के लिए विख्यात था। बर्तनों पर सोने–चांदी के सुंदर जड़ाऊ कार्य के लिए बीदर प्रसिद्ध था। पांचाल समुदाय, जिसमें सुनार, कसेरे, लोहार,

राजमिस्त्री, बढ़ई शामिल थे, मंदिरों, राजमहलों, भवनों के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। कांस्य की बनी चोलकालीन मूर्तियाँ कारीगरी (शिल्पकारी) का उत्कृष्ट नमूना है। चोल कांस्य मूर्तियाँ **लुप्तमोम विधि** से बनाई जाती थी।

चित्र : 6 चीनी शिल्प का एक नमूना

लुप्तमोम तकनीक

इस तकनीक के अंतर्गत मोम की एक मूर्ति बनाई जाती है। इसके ऊपर मिट्टी की परत चढ़ाई जाती है। इसके बाद इसे सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। सूखने के बाद उसे गर्म किया जाता है, जिससे मोम पिघल जाता है और साँचा रह जाता है। साँचे में पिघली हुई धातु भर दिया जाता है। धातु ठंडी होकर जब ठोस हो जाती है तो मिट्टी को सावधानी से हटा दिया जाता है और उसमें से निकली मूर्ति को पालिस कर चमका दिया जाता है।

चित्र : 7 नटराज शिव की कांस्य प्रतिमा

*** क्या आज धातु की मूर्तियाँ इसी तकनीकी से बनाई जाती हैं?पता लगाएँ?**

यूरोप के देश, व्यापारिक उद्देश्य से भारत के मसालों एवं कपड़ों की तलाश में लगे हुये थे। 1498 ई॰ में पुर्तगाल के निवासी वास्को–डी–गामा आशा अंतरीप की यात्रा करते हुये कालीकट पहुँचा। पुर्तगाल, भारत में व्यापारिक पैठ जमाने वाला पहला यूरोपीय देश था। पुर्तगाल ने अपने मजबूत एवं श्रेष्ठ जहाजी शक्ति का इस्तेमाल कर हिन्द महासागर से लाल सागर के समुद्री मार्ग पर एकाधिकार जमा लिया। पुर्तगाली व्यापारियों ने भारत के तटीय क्षेत्रों गोआ, कालीकट, कोचीन, हुगली, मयलापुर में नौ–सैनिक अड्डे स्थापित किये। कालीमिर्च, नील, शोरा, सूती कपड़े, घोड़े उनके व्यापार की मुख्य वस्तु थी। उन्होंने अपने व्यापारिक एकाधिकार को बनाये रखने के लिए कार्ट्ज (पारपात्र) जारी करने की व्यवस्था प्रारंभ की। यह एशियाई समुद्र में जहाजों के आने–जाने के लिए एक प्रकार का आज्ञा पत्र था। इसके न होने पर माल लूट कर जहाज को जब्त कर लिया जाता था। आज्ञा पत्र (कार्ट्ज) देने के बदले एक निश्चित धनराशि ली जाती थी।

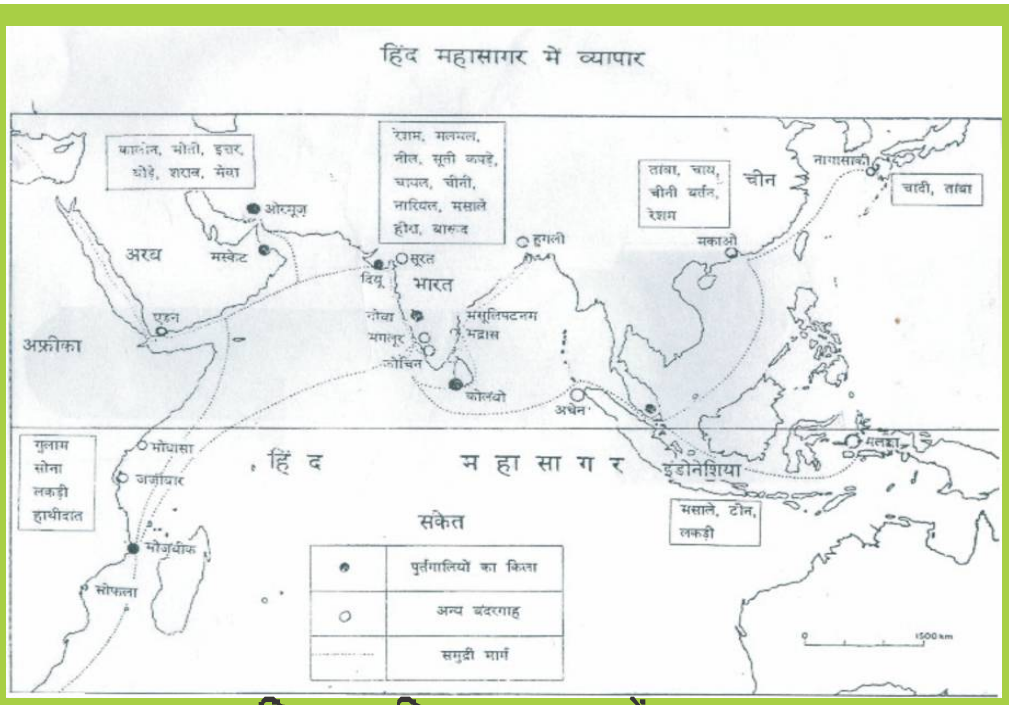

चित्र : 8 हिन्द महासागर में व्यापार

सत्रहवीं शताब्दी में यूरोप के अन्य देश–इंग्लैंड, हॉलैण्ड (डच) एवं फ्रांस के

व्यापारियों ने भारत के साथ व्यापार करने के लिए ईस्ट इंडिया कंपनी बनाई। इन यूरोपीय कंपनियों ने व्यापार की सुविधा के लिए भारत के विभिन्न शहरों एवं तटीय इलाकों में कोठियों (गोदाम) की स्थापना की। व्यापारिक कोठियों की स्थापना के लिए उन्हें भारतीय शासकों की अनुमति लेनी पड़ती थी। यूरोपीय कंपनियों के व्यापार के प्रसार से पुर्तगालियों के व्यापारिक क्रियाकलाप कम होने लगे। यूरोपीय कंपनियाँ अपने व्यापारिक स्वार्थ के लिए आपस में संघर्ष करने लगीं। उन्हें भारतीय शासकों एवं व्यापारियों से भी मुकाबला करना पड़ता था। अन्ततः इस संघर्ष में अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी (इंग्लैण्ड के व्यापारी) सफल रही और भारत में सर्वाधिक सफल राजनीतिक एवं वाणिज्यिक शक्ति के रूप में उभरकर सामने आयी।

ईस्ट इंडिया कंपनी:–
इसके अतंर्गत कई व्यापारी एक साथ मिलकर साझेदारी में कंपनी बनाते थे। किसी भी व्यापारिक गतिविधि से जुड़े लाभ–हानि में वे सभी बराबर के साझेदार होते थे।

यूरोपीय व्यापारियों के आगमन के बाद यूरोप के देशों में भारतीय सूती कपड़े की माँग में तेजी आई। अधिक–से–अधिक लोगों ने वस्त्र निर्माण से संबंधित कार्य–कताई, बुनाई, धुलाई, आदि व्यवसाय को अपना लिया। लेकिन इस काल में दस्तकारों की स्वतंत्रता घटने लगी। यूरोपीय कंपनियाँ भारत के दस्तकारों (कारीगरों) को अग्रिम राशि देती थीं तथा उनसे उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन करवाती थीं जिनकी मांग यूरोप के देशों में अधिक थी। इस कार्य में भारतीय व्यापारी यूरोपीय कंपनियों के एजेंट के रूप में काम करते थे। इसे 'दादनी' व्यवस्था कहते थे।

मानचित्र 8 को देखें और बतायें कि भारत से विदेशों को जानेवाली एवं विदेशों से भारत आनेवाली कौन–सी वस्तुएँ थीं ?

शहरों के बदलते स्वरूप :

अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी ने अपनी व्यापारिक गतिविधियों को संचालित करने के लिए कलकत्ता, मद्रास, बम्बई में कोठियों का निर्माण किया। यहाँ आयात–निर्यात किये जाने वाली वस्तुओं को रखा जाता था। कोठियों में कम्पनी के दफ्तर एवं कर्मचारियों के लिए आवास भी बने होते थे। सुरक्षा के लिए कोठियों की घेराबंदी की जाती थी। किलेबंद कोठियों के बाहर भारतीय व्यापारियों, दस्तकारों एवं शिल्पकारों को बसाया गया जो कम्पनी के लिए व्यापारिक वस्तुओं का उत्पादन करते थे। इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी में कलकत्ता, मद्रास, बम्बई बड़े शहरी केन्द्र के रूप में उभरे, जो आज भारत के प्रमुख महानगर हैं।

चित्र : 9 कोलकाता स्थित अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कंपनी की व्यापारिक कोठी (गोदाम) फोर्ट विलियम का चित्र

पटना की पृष्ठभूमि: एक नजर

वर्तमान पटना का इतिहास प्राचीन पाटलिपुत्र से जुड़ा है। व्यापारिक महत्व के कारण पट्टन (शहर या नगर) से पटना शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। मध्यकाल में पटना अजीमाबाद नाम से भी काफी प्रचलित रहा। अन्य मध्यकालीन नगरों के समान पटना दीवारों से घिरा था, जिसमें कई छोटे–बड़े दरवाजे लगे थे। पटनासिटी में पश्चिमी एवं पूर्वी दरवाजा आज भी देखा जा सकता है।

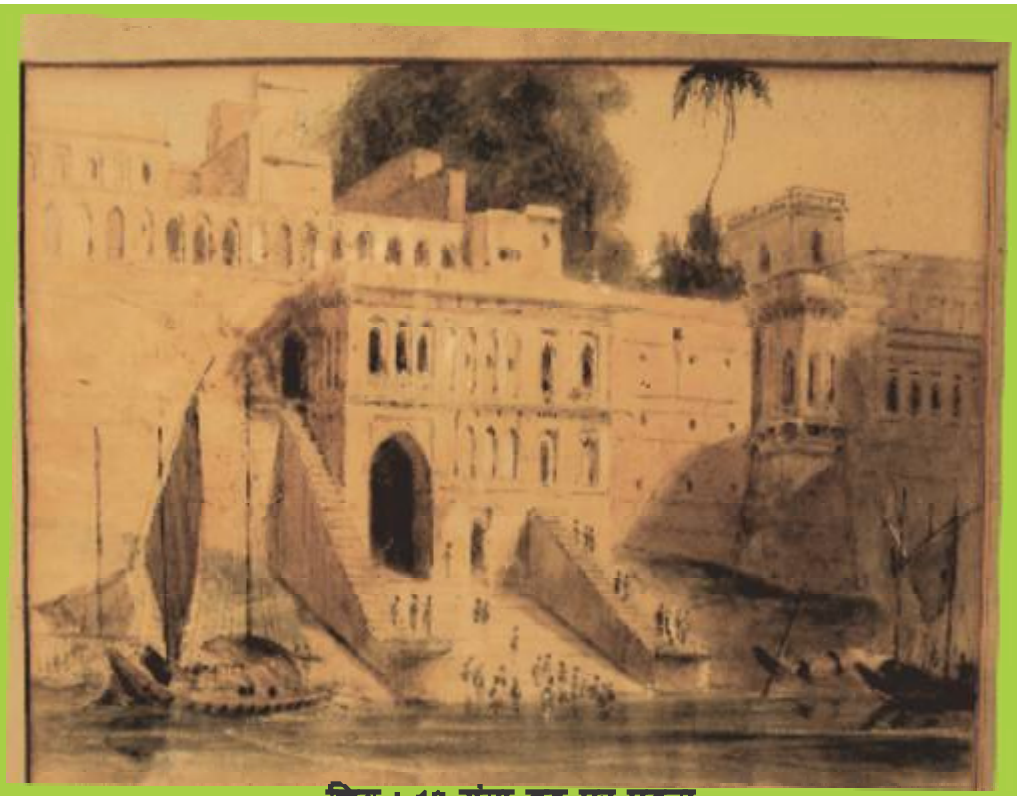

चित्र : 10 गंगा तट पर पटना

अफगान–मुगल काल में बिहार सूबे का एक नाजीम या सूबेदार होता था। 1704 ई० में औरंगजेब का पोता अजीम–उस–शान बिहार का सूबेदार बना। अजीम ने पटना को एक नए ढंग से बसाया और इसे अजीमाबाद का नया नाम दिया। उसने मुहल्लों को बसाने का काम इस प्रकार से किया कि अजीमाबाद की सुंदरता बढ़ गई। लोदियों के मुहल्ले का नाम **लोदीकटरा** पड़ा। इस मुहल्ले के पास मुगल सेना के अधिकारी जहाँ रहते थे, उसे **मुगलपुरा** कहा गया। शेरशाही परिवार के रहने की जगह **कैवां शिकोह** के नाम से जाना जाता था। उलेमा, साहित्यकार, कवि, शायर, का मुहल्ला **मैदाने फसाहत** के नाम से

बसा। सद्र–उस–सुदूर (मुख्य न्यायाधीश) का निवास स्थान सदर गली के नाम से मशहूर है। हिन्दू उमरा (अधिकारी) के कारण दीवान मुहल्ला आबाद हुआ।

पटना में मुहल्लों का नाम पेशे के आधार पर पड़ा। उनमें से एक मुहल्ला ठठेरी बाजार है। तांबे एवं पीतल के बर्तन बनाने वाले सैकड़ों परिवारों के कारण इस मुहल्ले का नाम ठठेरी बाजार पड़ा। जिस गली में सेना के लिए तीर और कमान बनाने वाले रहते थे, उसका नाम कमानगर की गली कहलाता था आज यह कमंगर गली के नाम से जाना जाता है। पान बेचने वालों का मुहल्ला पानदारी, नमक का बाजार नूनगोला, चावल का बाजार चौहट्टा, गुड़ का बाजार गुरहट्टा आदि।

सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेज एवं डच व्यापारिक कंपनियों के प्रयास से पटना एक प्रमुख व्यापारिक केन्द्र बन चुका था। अनेक जैन व्यापारी पटना में बसना शुरू कर दिये थे, जिनमें सबसे धनी व्यापारी हीरानंद शाह था। यूरोपीय व्यापारी के माध्यम से पटना का व्यापार मध्य एशिया, पश्चिम एशिया, अफ्रीका के तटवर्ती क्षेत्रों और यूरोप के देशों के साथ उन्नत रूप में होता था। यूरोप के व्यापारियों की अभिरुचि सूती वस्त्र, नील, एवं शोरे की प्राप्ति में थी। अंग्रेजों द्वारा पटनासिटी के गुलजारबाग मुहल्ले में गंगा नदी के किनारे एक व्यापारिक कोठी 1620 ई० में बनवायी गयी थी। इस कोठी का मुख्य द्वार गंगा नदी की ओर था। यह कोठी ऊँची दिवारों से घिरी थी। पटना से अंग्रेज शोरा प्राप्त करते थे, क्योंकि यूरोप में इसकी खूब मांग थी और इससे बारूद बनाया जाता था। पटना के आसपास के क्षेत्रों से शोरा इकट्ठा किया जाता था और इसे नाव द्वारा गंगा के रास्ते हुगली, फिर वहाँ से यूरोप ले जाया

जाता था।

पटना से चावल और चीनी बंगाल के बाजारों में जाता था। पटना के निकट लखावर कपड़ा उत्पादन का प्रमुख केन्द्र था। यहाँ देश–विदेश के व्यापारी आते थे और माल खरीदते थे। बिहार में बड़े पैमाने पर रेशम वस्त्र बनाया जाता था। 1620–21 ई० में अंग्रेजों द्वारा पटना में रेशम से धागे बनाने के कारखाना का निर्माण किया गया था।

1580 ई० में मुगल बादशाह अकबर ने टकसाल (सिक्का बनाने का केन्द्र) की स्थापना की थी। 1706 ई० में अजीम के समय में यहाँ बनाये गये सिक्कों पर अजीमाबाद शब्द का प्रयोग किया गया। पटना शहर की पूर्वी सीमा पर मालसलामी मुहल्ला, मुगल काल में व्यापारिक सामान या माल पर चुंगी (सलामी) की वसूली का केन्द्र था।

अभ्यास

फिर से याद करें।

1. शासक, व्यापारी एवं धनाढ्य लोग मंदिर क्यों बनाते थे?
2. शहरों में कौन–कौन लोग रहते थे?
3. व्यापारिक वस्तुओं के यातायात के क्या साधन थे?
4. सत्रहवीं शताब्दी में किन यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों का भारत में आगमन हुआ?

5. सुमेल करें?

(क) मंदिर नगर	(i) दिल्ली
(ख) तीर्थ स्थल	(ii) तिरूपति
(ग) प्रशासनिक नगर	(iii) गोआ
(घ) बन्दरगाह नगर	(iv) पटना

आइए समझें :–

6. मध्यकालीन भारत में आयात–निर्यात की वस्तुओं की सूची बनाइए?
7. भारत में यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों के आगमन के कारणों को रेखांकित करें?
8. मंदिरों के आस–पास शहर क्यों विकसित हुए?
9. लोगों के जीवन में मेले एवं हाट की भूमिका का वर्णन करें?

आइए विचार करें :

10. इस अध्याय में वर्णित शहरों की तुलना अपने जिले में स्थित शहरों से करें?क्या दोनों के बीच कोई समानता या असमानता है?
11. धातुमूर्ति निर्माण के लुप्तमोम तकनीक के क्या लाभ हैं ?

आइए करके देखें।

12. आप अपने निकट के तीर्थस्थल का भ्रमण कर पता लगाएँ और बताएँ कि लोग वहाँ क्यों जाते हैं, वहाँ क्या करते हैं?क्या उस स्थल के आस–पास दुकानें हैं और वहाँ क्या खरीदा और बेचा जाता है?
13. आप अपने गाँव या शहर में काम करने वाले कारीगरों (शिल्पियों) का पता लगाएँ और यह जानकारी प्राप्त करें कि वे वस्तुओं का निर्माण (उत्पादन) किस तरीके से करते हैं?